इकाई 2 बंगाल और अवध

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

अठारहवीं शताब्दी में क्षेत्रीय राज्य व्यवस्थाओं का उदय हुआ। इस इकाई को पढ़ने के बाद
आप:

- स्वायत्तता प्राप्ति के पूर्व बंगाल और अवध की प्रशासनिक व्यवस्था का वर्णन कर सकेंगे,
- बंगाल और अवध के स्वायत्त राज्य में रूपांतरण की प्रक्रिया को रेखांकित कर सकेंगे,
- उस संदर्भ पर प्रकाश डाल सकेंगे, जिसके तहत उन्हें ब्रिटिश साम्राज्यवादी व्यवस्था में मिला लिया गया, और
- अवध और बंगाल की क्षेत्रीय राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप और कार्यकलाप को व्याख्यायित कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

आजकल 18वीं शताब्दी का जो इतिहास लिखा जा रहा है, उसमें क्षेत्रीय राजनीतिक व्यवस्थाओं के अभ्युदय और अनुभव पर विशेष बल दिया जा रहा है, मुगल साम्राज्य का पतन अब इस शताब्दी की सर्वप्रमुख प्रवृत्ति नहीं मानी जाती है। इकाई 1 में आपने 18वीं शताब्दी की राजनीतिक व्यवस्था की आम जानकारी प्राप्त की। इस इकाई में हमने उन तत्वों

और प्रक्रियाओं को दिखाने की कोशिश की है, जिनके कारण साम्राज्यी प्रांत स्वायत्त राज्यों में परिवर्तित हो गये। यहाँ हमारा मुख्य केन्द्र बंगाल और अवध है। हालांकि इन दोनों में, कुछ मामलों में, विभिन्नता थी, पर रूपांतरण के आरंभिक वर्षों में उनके संगठन में समानतायें थीं। हम इस तथ्य का विश्लेषण करेंगे, क्योंकि इससे हमें अठारहवीं शताब्दी की राजनीतिक व्यवस्था की महत्त्वपूर्ण विशेषताओं और प्रक्रियाओं की तह में जाने का मौका मिलेगा। इस इकाई में पहले हमने यह दिखाया है कि किस प्रकार बंगाल और अवध मुगल सूबों से स्वायत्त राज्य बने और फिर किस प्रकार ब्रिटिश साम्राज्य ने उन्हें अपने अधीन कर लिया। इस क्रम में हमने क्षेत्रीय राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप और कार्यकलाप की भी चर्चा की है।

2.2 मुगलों के अधीन बंगाल और अवध

18वीं शताब्दी में स्वायत्त और स्वतंत्र राज्य के रूप में बंगाल और अवध का उदय अपने आप में अकेली घटना नहीं थी। अवध, बंगाल, हैदराबाद, मैसूर और अन्य क्षेत्रीय राज्यों का उदय 18वीं शताब्दी की राजनीतिक व्यवस्था की प्रमुख विशेषता है। मुगल साम्राज्य के पतन पर लगातार चल रहे शोध से यह स्पष्ट हो चुका है कि प्रशासनिक, कृषीय, सामाजिक आदि संकटों के कारण मुगल साम्राज्यी व्यवस्था भरभरा कर गिर गयी। इतिहासकारों के बीच इन विभिन्न कारकों के स्वरूप और सापेक्ष महत्व पर अभी भी बहस चल रही है। (इकाई 1 से आपको इसका कुछ आभास हो गया होगा)। इस इकाई में हमारे लिए अठारहवीं शताब्दी के दौरान मुगल प्रांतीय राजनीतिक व्यवस्था की जानकारी जरूरी है, इसे जानने के बाद ही हम बंगाल और अवध में नयी शासन प्रणाली के उदय की प्रक्रिया को समझ सकेंगे।

बंगाल और अवध मुगल साम्राज्यी व्यवस्था के अंतर्भूत हिस्से थे। दोनों प्रांतों में नाजिम और दीवान जैसे बड़े पदाधिकारियों की नियुक्ति सीधे मुगल बादशाह करता था। प्रांतीय पदाधिकारियों का विवरण इस प्रकार है।

सूबा या प्रांत में राजस्व प्रशासन का उच्चाधिकारी **दीवान** कहलाता था। और नाजिम कार्यकारी प्रधान था, जो नागरिक और सैनिक प्रशासन से संबंधित अन्य मामलों पर नियंत्रण रखता था। बख्शी, मुख्य सेना का वेतन-देय पदाधिकारी होता था, कोतवाल पुलिस विभाग का उच्चाधिकारी होता sr, काजी न्यायाधीश को कहते थे और वाकया-नवीस राजनीतिक मामलों से संबद्ध सूचनाओं को एकत्र करता था और उसकी सूचना देता था।

सूबा या प्रांत सरकारों में विभक्त थे। यह फौजदार के अधीन होता था। सरकार पुनः परगनों में विभक्त किए जाते थे। इसके अतिरिक्त, विभिन्न स्तरों पर कई पदाधिकारियों की नियुक्ति होती थी। प्रांत में स्थानीय स्तर पर जमींदार का स्थानीय जनता और प्रशासन पर सीधा नियंत्रण होता था।

नाजिम और दीवान की नियुक्ति पर बादशाह का पूर्ण नियंत्रण था और इसी नियंत्रण के जरिए वह प्रांत पर अपनी पकड़ मजबूत रखता था। इसे संतुलन और नियंत्रण व्यवस्था के रूप में जाना जाता है। इन पदों पर बादशाह अपने भरोसे के लोगों को नियुक्त करता था। नाजिम की शक्ति पर नियंत्रण रखने के लिए बादशाह अलग से दीवान नियुक्त करता था। इन दो बड़े पदाधिकारियों के अतिरिक्त प्रांतीय कुलीन वर्ग और कई अन्य पदाधिकारी जैसे अमील, फौजदार आदि बादशाह पर ही निर्भर थे, क्योंकि वही उनकी नियुक्ति mar था। साम्राज्य का राजनीतिक एकीकरण जमींदार, छोटे और बड़े पदाधिकारियों जैसी कई शक्तियों के बीच समन्वय और संतुलन का ही प्रतिफलन था। इनमें से कुछ अधिकारियों का जिक्र हम अभी कर चुके हैं।

जब तक साम्राज्य प्रांतीय प्रशासन पर अपना प्रभावी नियंत्रण कायम रख सका, तब तक यह व्यवस्था सुचारू रूप से चलती रही।

सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में लगातार केन्द्रीय सत्ता की प्रांतीय प्रशासन पर पकड़ कमजोर होती गयी और इस समय तक वह प्रांतीय गवर्नर से नजराना प्राप्त करने तक सीमित रह गयी। केन्द्रीय सरकार की अधीनता स्वीकार करने के

बावजूद, प्रांतीय गवर्नर हमेशा अपने को स्थानीय शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित करने की कोशिश करते रहते थे और एक स्वतंत्र शक्ति के रूप में कार्य करते थे। केन्द्रीय राज्यकोष में धन अनियमित रूप से भेजा जाने लगा। प्रांतीय गवर्नर वंशगत प्रशासन की स्थापना करने लगे और प्रशासन में अपने आदमियों की नियुक्ति करने लगे। इन सारी गतिविधियों से केन्द्रीय शासन कमजोर हुआ और प्रांतों पर उनकी पकड़ ढीली होती गयी। स्थानीय स्तर पर स्वतंत्र शक्तियों का उदय हुआ। आगे आने वाले अंश में हम 18वीं शताब्दी के दौरान स्वायत्त स्वतंत्र राज्य के रूप में अवध और बंगाल के उदय पर प्रकाश डालेंगे।

2.3 बंगाल: स्वायत्ता की ओर

अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में स्वतंत्र स्वायत्त राज्य के रूप में बंगाल का उदय विभिन्न मुगल सूबों में पनप रही प्रांतीय स्वायत्ता की प्रवृत्ति का ज्वलंत उदाहरण है। हालांकि मुगल बादशाह की संप्रभुता को चुनौती नहीं दी गयी, पर प्रांतों में व्यावहारिक रूप में गवर्नर का स्वतंत्र और वंशगत अधिकार स्थापित होने लगा था और सभी मातहत अधिकारियों पर गवर्नर का सीधा नियंत्रण होने लगा था। इस प्रकार बंगाल में स्वतंत्र स्वायत्त शक्ति का उदय हुआ।

2.3.1 मुर्शिद कुली खाँ और बंगाल

बंगाल में स्वतंत्र राज्य की नींव मुर्शिद कुली खाँ द्वारा डाली गयी। बंगाल की राजस्व व्यवस्था को सुव्यवस्थित करने के लिए उसकी प्रथम नियुक्ति दीवान के रूप में हुई थी। औरंगजेब की मृत्यु के बाद केन्द्रीय सत्ता में आयी अस्थिरता के दौर में मुर्शिद कुली खाँ एक कुशल प्रशासक के रूप में सामने आया। इन दोनों कारणों से वह बंगाल का सूबेदार बन बैठा। हालाँकि मुर्शिद कुली खाँ ने मुगलों की साम्राज्यी शक्ति की अवमानना नहीं की, पर उसकी प्रशासनिक व्यवस्था से ही बंगाल में वंशगत शासन की शुरुआत हुई। बादशाह द्वारा सीधे तौर पर नियुक्त यह बंगाल का अंतिम गवर्नर था। मुर्शिद कुली खाँ ने नाज़िम और दीवान के पदों को मिलाकर एक कर दिया। वस्तुत: प्रांत में दीवान की नियुक्ति का मुख्य उद्देश्य प्रांतीय गवर्नर पर अंकुश रखना था। पर मुर्शिद कुली खाँ ने इन दोनों पदों को मिलाकर गवर्नर की शक्ति को मजबूत करने की कोशिश की। यह प्रांत में स्वतंत्र सत्ता स्थापित होने का स्पष्ट संकेत था।

मुर्शिद कुली खाँ ने बंगाल में वंशानुगत शासन की शुरुआत की। यह स्पष्ट हो चुका था कि उसकी मृत्यु के बाद बंगाल की नवाबी पर उसके परिवार का ही अधिकार होगा। वे बराबर बादशाह की अनुशंसा लेते रहे, पर नवाब के चुनाव में अब बादशाह का कोई नियंत्रण नहीं था।

मुर्शिद कुली खाँ का प्रथम उद्देश्य बंगाल की राजस्व वसूली को सुदृढ़ करना था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मुर्शिद कुली खाँ ने प्रांत की स्थानीय शक्तियों से नये संबंध कायम किए। इससे स्वायत्त सूबे को एक बृहद् आधार प्राप्त हुआ, जिसके तहत 1730 और 1740 के दशकों में उसकी कार्य प्रणाली विकसित हुई। मुर्शिद कुली खाँ ने राजस्व व्यवस्था को मजबूत किया और इसकी वसूली के लिए कई कदम उठाए। इनमें से निम्नलिखित प्रमुख हैं:

- छोटे बिचौलिए जमींदारों का उन्मूलन
- उड़ीसा प्रांत के सीमांत के विद्रोही जमींदारों और जागीरदारों का निष्कासन
- खालसा भूमि का अधिक से अधिक निर्माण
- उन बड़े जमींदारों को प्रोत्साहन, जो राजस्व वसूली और भुगतान की जिम्मेवारी लेते थे।

मुर्शिद कुली खाँ ने कुछ बड़े जमींदारों को अपनी सम्पत्ति बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया। ये बड़े जमींदार बागी जमींदारों की सम्पत्ति खरीद लेते थे। बंगाल की प्रमुख जमींदारियाँ राजसाही, दीनाजपुर, बुर्दवान, नादिया, बीरभूम, बिशनूपुर और बिहार की प्रमुख जमींदारियाँ तिरहुत, शाहाबाद और टेकारी में विकसित हुई। मुर्शिद कुली खाँ ने इन जमींदारों के माध्यम

से गाँवों पर और राजस्व पर अपना नियंत्रण स्थापित किया। दूसरी तरफ इन जमींदारों ने छोटे पड़ोसी जमींदारों पर अपना कब्जा जमाया। परिणामत: 1727 तक इस प्रांत में जमींदार एक प्रमुख राजनीतिक शक्ति के रूप में उभरे।

इसके साथ-साथ धनी और व्यापारिक शक्तियों को भी प्रमुखता मिली। जमींदारों पर राजस्व चुकाने का दबाव हमेशा बना रहता था, इस कार्य में वे विभिन्न सेठ-साहूकारों की सहायता लिया करते थे। अत: अगर इस काल में सेठ-साहूकारों को नवाब का प्रोत्साहन और संरक्षण प्राप्त हुआ, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। ये सेठ बड़े जमींदारों के गारंटीकर्ता के रूप में ही कार्य नहीं करते थे, बल्कि बंगाल के राजस्व को दिल्ली तक पहुँचाने का भी जिम्मा लेते थे।

बंगाल में विकसित सत्ता का यह स्वरूप मुगल प्रांतीय प्रशासन व्यवस्था से बिल्कुल भिन्न था, निश्चित रूप से यह प्रांत पर दिल्ली की कमजोर होती पकड़ का प्रतिफलन था। पर इस नये बदले माहौल के बावजूद नाज़िम ने दिल्ली से अपना पूर्ण संबंध विच्छेद नहीं किया और वार्षिक राजस्व भेजता रहा। लेकिन दूसरी तरफ, यह भी स्पष्ट हो चला था कि मुर्शिद कुली खाँ बंगाल को अपनी मिल्कियत समझने लगा था और वह इस बात के लिए सजग था कि उसके बाद सत्ता की बागडोर उसके परिवार के किसी सदस्य को ही मिले, न कि किसी बाहर के व्यक्ति को। अत: मुर्शिद कुली ने अपनी बेटी के लड़के सरफराज को अपना उत्तराधिकारी बनाया। मजबूत साम्राज्यी सरकार के दिनों में यह फैसला कतई बर्दाश्त नहीं किया जा सकता था।

2.3.2 शुजाउद्दीन और बंगाल

मुर्शिद कुली खाँ ने सरफराज को अपना उत्तराधिकारी बनाया, पर उसके पिता शुजाउद्दीन मुहम्मद खान ने उसे अपदस्थ कर दिया। शुजाउद्दीन के शासन के दौरान दिल्ली और मुर्शिदाबाद का संबंध कायम रहा। वह मुगल दरबार को राजस्व भेजता रहा। पर, इसके बावजूद, प्रांतीय सरकार के मामलों में शुजा अपने ढंग से कार्य करता था। उसने ऊंचे पदों पर अपने आदमियों की नियुक्ति की और बाद में उसे दिल्ली से अनुशंसित करवा लिया। शुजा ने मुर्शिद कुली खाँ की प्रशासन व्यवस्था को कायम रखा। प्रांत पर अपनी पकड़ मजबूत बनाए रखने के लिए उसने भी स्थानीय शक्तियों से अपने संबंध विकसित किए। फिलिप बी. काल्किन्स का मत है कि 1730 के दशक के दौरान बंगाल की सरकार विभिन्न शक्तियों का समुच्चय थी न कि बाहरी साम्राज्यी शासन का एक हिस्सा। बदलता हुआ यह शक्ति संतुलन तब और स्पष्ट हो गया जब 1739–40 में अलीवर्दी खाँ ने शुजाउद्दीन खाँ के वैधानिक उत्तराधिकारी सरफराज खाँ को मारकर गद्दी हथिया ली। जमींदारों और महाजनों ने अलीवर्दी खाँ को अपना समर्थन दिया।

2.3.3 अलीवर्दी खाँ और बंगाल

अलीवर्दी खाँ के शासन काल में मुगल सत्ता और बंगाल सरकार के संबंध में एक नया मोड़ आया। अपने पूर्वाधिकारी की तरह अलीवर्दी ने भी अपने पद की अनुशंसा मुगल दरबार से ली। पर उसके शासन-काल में मुगलों से विच्छेद आरंभ हो गया और इसे बंगाल सूबे की स्वायत्तता की शुरुआत मान सकते हैं। अलीवर्दी खाँ ने प्रांतीय प्रशासन के सभी प्रमुख पदों पर खुद नियुक्ति की और इसके लिए मुगल दरबार की अनुशंसा लेने की भी कोशिश नहीं की। पहले इन्हीं नियुक्तियों के जरिए बादशाह अपना नियंत्रण स्थापित करता था। अलीवर्दी ने पटना, कटक और ढाका में अपनी पसंद के उप-नवाबों की नियुक्ति की।

राजस्व प्रशासन की देखभाल के लिए मुतसद्दी, अमील या स्थानीय दीवान के रूप में बड़ी संख्या में हिंदुओं को नियुक्त किया। उत्तर भारत तथा बिहार के पठानों की मदद से अलीवर्दी ने मज़बूत सैन्य शक्ति स्थापित की। इसके अतिरिक्त दिल्ली भेजा जाने वाला नियमित नजराना भी बाधित हुआ, यह केन्द्रीय सत्ता की बंगाल पर कमजोर होती पकड़ का प्रमाण था। समकालीन स्रोतों के अनुसार जहाँ मुर्शिद कुली और शुजाउद्दीन प्रतिवर्ष 10,000,000 रुपये बतौर नजराना भेजा करते थे, वहीं अलीवर्दी ने 15 वर्षों में कुल 4,000,000 से 5,000,000 रुपये तक ही भेजे। अलीवर्दी ने वार्षिक नजराने का भुगतान बंद कर दिया।

यह ध्यान देने की बात है कि 1740 के दशक के दौरान बंगाल, बिहार और उड़ीसा में एक प्रशासनिक व्यवस्था स्थापित हो चुकी थी, जिसने दिल्ली दरबार के प्रभाव को काफी कम कर दिया। यह सही है कि अलीवर्दी खाँ ने औपचारिक रूप से साम्राज्यी सत्ता से संबंध विच्छेद नहीं किया, पर व्यवहारत: इस काल के दौरान उत्तरी भारत में एक स्वतंत्र राज्य का उदय हो चुका था। सामान्यत: वार्षिक राजस्व की वसूली और प्रांतीय अधिकारियों की नियुक्ति के माध्यम से केन्द्र प्रांत पर अपना नियंत्रण रखता है। ये दोनों ही माध्यम अलीवर्दी के शासनकाल में समाप्त हो चुके थे। व्यावहारिक रूप में बंगाल में साम्राज्यी सत्ता का कोई दखल नहीं था।

जब अलीवर्दी खाँ बंगाल में अपना पैर जमाने की कोशिश कर रहा था, उस समय उसे दो मजबूत बाहरी शक्तियों (मराठों और अफगान विद्रोहियों) का सामना करना पड़ा। मध्य भारत में अपना नियंत्रण स्थापित करने के बाद मराठे मध्य भारत के बाहर अपना नियंत्रण स्थापित करना चाह रहे थे। वे पड़ोसी राज्यों से जबरन चौथ वसूल करते थे। मराठा साम्राज्य के निर्माण और धन की प्राप्ति के उद्देश्य से मराठों ने 1742 से 1751 के बीच तीन से चार बार बंगाल पर आक्रमण किया। हर बार बंगाल पर उनके आक्रमण से स्थानीय लोगों को माल और जान का नुकसान उठाना पड़ा। मराठों के इन लगातार हमलों को रोकने में असफल होकर और परेशान होकर अंतत: 1751 में अलीवर्दी ने मराठों के साथ संधि कर ली। अलीवर्दी 1,200,000 सालाना चौथ देने के लिए राजी हुआ और उड़ीसा मराठों को इस शर्त पर सौंप दिया गया कि वे फिर से अलीवर्दी के सीमा-क्षेत्र में प्रवेश नहीं करेंगे।
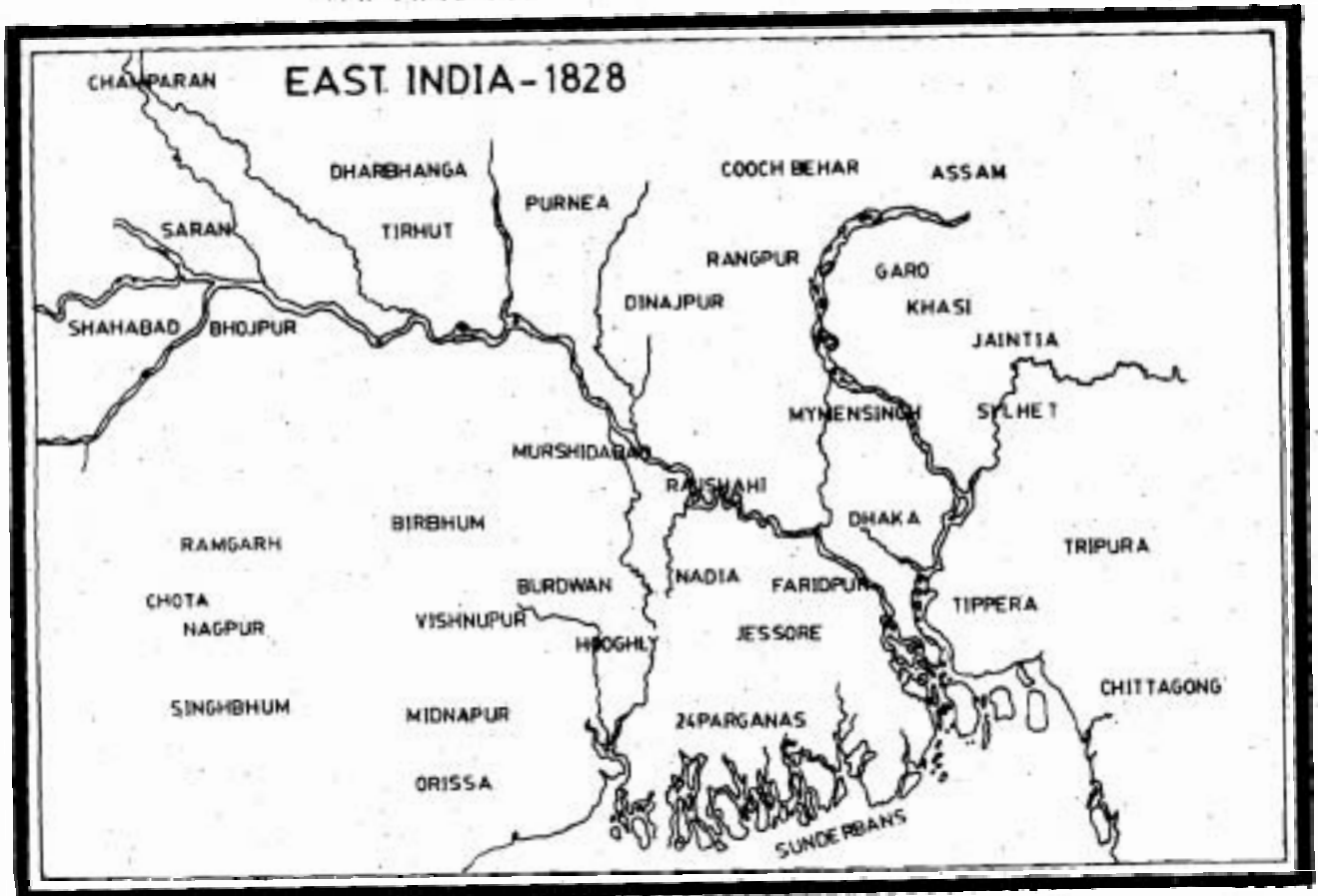
मानचित्र-2

अलीवर्दी को अफगान विद्रोही सेना का भी सामना करना पड़ा। अफगान सेनापति, मुस्तफा खाँ ने निष्कासित अफगान फौज की मदद से अलीवर्दी के लिए गंभीर खतरा पैदा कर दिया। 1748 में इस फौज ने पटना पर कब्जा कर लिया और इसे लूटा पाटा। पर, अलीवर्दी खाँ कठिन संघर्ष के बाद उन्हें हराने में सफल हुआ और पटना पर कब्ज़ा किया। मराठों और अफगानों के खिलाफ लड़े गये लंबे युद्धों से अलीवर्दी खाँ के राज्यकोष पर काफी दबाव पड़ा। शीघ्र ही इसका प्रभाव जमींदारों, पदाधिकारियों, महाजनों, व्यापारियों और यूरोपीय कम्पनियों पर भी पड़ा। अगले भाग में हम देखेंगे कि किस प्रकार इन शक्तियों ने स्वायत्त राज्य के आधार को कमजोर किया और ब्रिटिश साम्राज्यी व्यवस्था के अधीन होने का मार्ग प्रशस्त हुआ।

बोध प्रश्न 1

1) 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में प्रांत में साम्राज्यी नियंत्रण के पतन की व्याख्या आप कैसे करेंगे ? 100 शब्दों में उत्तर दें।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2) बंगाल में स्वतंत्र राजनीतिक सत्ता के तीन या चार लक्षणों का जिक्र करें।

....

....

....

....

....

....

....

....

2.4 बंगाल: पराधीनता की ओर

1756 ई. में अलीवर्दी की मृत्यु के बाद उत्तराधिकारी के प्रश्न को लेकर दरबार के विभिन्न समुदायों के बीच मनमुटाव उत्पन्न हो गया। वस्तुत: किसी निश्चित उत्तराधिकार के नियम के अभाव में हरेक नवाब की मृत्यु के बाद गद्दी के लिए संघर्ष होता था। अलीवर्दी ने अपने पोते सिराजुद्दौला को अपना उत्तराधिकारी बनाया। सिराजुद्दौला के दावे को पूर्णिया के फौजदार शौकत जंग और अलीवर्दी की बेटी घसिटी बेगम ने चुनौती दी। इससे दरबार में गुटबंदी को प्रोत्साहन मिला। विभिन्न गुटों को विभिन्न जगत सेठ, जमींदार और अन्य प्रभावशाली समुदाय समर्थन देते थे। इससे फूट बढ़ी और स्वतंत्र बंगाल सूबे का अस्तित्व खतरे में पड़ गया। इस संकट को अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपनी चालाकियों से और गहरा कर दिया।

2.4.1 प्लासी और उसके बाद

आगे आने वाले वर्षों में कुछ ऐसी घटनाएँ घटीं जिनका प्रतिफलन 1757 के प्लासी के युद्ध और षड्यंत्र के रूप में हुआ। यहीं से ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा बंगाल के अधीनीकरण की प्रक्रिया भी शुरू हुई। नवाब और ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीच संघर्ष के प्रमुख मुद्दे थे: (1) राजस्व मुक्त व्यापार के विशेषाधिकार का दुरुपयोग; 1717 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने यह विशेषाधिकार मुगल बादशाह फर्रुखसियर से प्राप्त किया था। इस विशेषाधिकार का प्रयोग कम्पनी के व्यापारी अपने निजी व्यापार के लिए जबरन करने लगे। (2) कलकत्ता शहर के अंदर किलेबंदी का अधिकार। बंगाल के नवाबों ने इन दोनों कार्यों का लगातार विरोध किया। सिराजुद्दौला के शासन काल में यह संकट और गहरा हो गया। इसके परिणामस्वरूप दोनों

शक्तियों (सिराजुद्दौला और ईस्ट इंडिया कंपनी) में युद्ध हुआ। सिराजुद्दौला के दरबार के असंतुष्ट तत्वों, खासकर जगत सेठों, यार लुत्फ खाँ, राय दुर्लभ और अमीर चन्द ने सिराजुद्दौला को पदच्युत करने के लिये अंग्रेज़ों का साथ दिया।

इस षड्यंत्र के पीछे असंतुष्ट तत्वों का वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था को ध्वस्त करना उद्देश्य नहीं था, बल्कि शायद वे अलीवर्दी के शासनकाल में स्थापित व्यवस्था को कायम रखना चाहते थे। प्लासी का युद्ध (1757) नवाब के दरबार में पनप रही गुटबंदी का ज्वलंत उदाहरण है। प्लासी में कम्पनी की जीत उनकी शक्ति के कारण नहीं, बल्कि नवाब के निकट सहयोगियों की धोखेबाजी के कारण हुई। मीर जाफर को नया नवाब बनाया गया। अंग्रेज़ों और नवाब के बीच एक संधि हुई, जिसके मुताबिक अंग्रेज़ों के व्यापारिक विशेषाधिकार को संरक्षण ही नहीं प्रदान किया गया, बल्कि इस विशेषाधिकार का क्षेत्र-विस्तार भी हुआ। इसके बदले कम्पनी ने आश्वासन दिया कि वह नवाब की सरकार में कोई हस्तक्षेप नहीं करेगी।

प्लासी के युद्ध में कम्पनी का साथ देने वाले षड्यंत्रकारियों ने बंगाल की स्वायत्तता का जो स्वप्न देखा था, वह स्वप्न ही साबित हुआ। शीघ्र ही मुर्शिद कुली खाँ और उसके उत्तराधिकारियों द्वारा स्थापित बंगाल की स्वायत्तता ढह गयी। मीर जाफर की अयोग्यता, दरबार के अंदर चल रहे षड्यंत्र और नवाब की सेना की कमजोरी से प्रोत्साहित होकर अंग्रेज़ प्रांत के कार्यकलापों में हस्तक्षेप करने लगे। मीर जाफर सैन्य सहायता के लिए कम्पनी पर निर्भर होता गया और इसके बदले में कम्पनी ने और अधिक धन और विशेषाधिकार प्राप्त किए। पर नवाब के पास इतना धन नहीं था कि वह कम्पनी की बढ़ती हुई मांग को पूरा कर सके। कम्पनी की अनगिनत मांग और नवाब की असमर्थता के कारण मीर जाफर और कम्पनी में अंततः प्रत्यक्ष संघर्ष हो गया। मीर जाफर को मजबूर होकर गद्दी छोड़नी पड़ी।

अंग्रेज़ों के साथ एक गुप्त समझौते के तहत मीर कासिम को नवाबी हासिल हुई, पर उसका भी वही हाल हुआ, जो मीर जाफर का हुआ था।

2.4.2 बक्सर और उसके बाद

मीर कासिम ने अपने शासन काल के पहले वर्ष में स्वतंत्र बंगाल राज्य स्थापित करने की भरपूर कोशिश की। वह अपनी राजधानी मुर्शिदाबाद से हटाकर मुंगेर (बिहार) ले गया ताकि अंग्रेज़ों के प्रभाव-क्षेत्र से दूर रह सके। उसका उद्देश्य एक केन्द्रीकृत सत्ता की स्थापना करना था। उसने राज्य की वित्तीय और सैन्य व्यवस्था को पुनः संगठित करने की कोशिश की। सेना को फिर से संगठित किया गया, एक बारूद और हथियारों का कारखाना स्थापित किया गया और संदिग्ध व्यक्तियों को सेना से निकाल दिया गया। गबन को रोका गया, फालतू खर्चों को बंद किया गया और जमींदारों को नियंत्रित किया गया। विद्रोही जमींदारों को पदच्युत कर दिया गया और उनके स्थान पर आमिलों और राजस्व-कृषकों की नियुक्ति की गयी। नवाब के इन प्रयासों से किसी को यह शक नहीं रहा कि नवाब एक स्वतंत्र और स्वायत्त शक्ति के रूप में कार्य करने के लिए कृत संकल्प है।

कम्पनी के लिए यह स्थिति स्वीकार्य नहीं थी। मीर कासिम ने व्यक्तिगत व्यापार का कसकर विरोध किया, क्योंकि इससे राज्य के राजस्व को धक्का पहुँचता था और नवाब की स्वायत्ता का हनन होता था। बंगाल में अंग्रेज़ों की व्यापारिक घुसपैठ से न केवल राज्य की आर्थिक गतिविधि बाधित हो रही थी, बल्कि यह नवाब के अधिकार को भी खुली चुनौती थी। दस्तक (राजस्व मुक्त व्यापार अधिकार) का कम्पनी के अधिकारियों द्वारा दुरुपयोग 1764 के युद्ध का तात्कालिक कारण बना। पटना पर अंग्रेज़ों द्वारा अचानक आक्रमण करने के बाद अंग्रेज़ों और मीर कासिम के बीच खुला युद्ध छिड़ गया। बिहार और उड़ीसा के प्रांतीय कुलीन वर्गों, अवध के नवाब और मुगल बादशाह शाह आलम ने इस युद्ध में मीर कासिम की सहायता की। पर यह संयुक्त मोर्चा अंग्रेज़ों को आगे बढ़ने से न रोक सका और बंगाल में नवाब के स्वतंत्र शासन का अंत हो गया।

मीर कासिम को गद्दी से उतारकर फांसी दे दी गयी और मीर जाफर को पुनः अधिक कड़ी शर्तों पर गद्दी पर बैठाया गया। अब उसे और उसके उत्तराधिकारियों को न केवल 5,00,000 रुपये मासिक कम्पनी को भुगतान करना था, बल्कि पदाधिकारियों को नियुक्त और पदच्युत करने में भी उनकी सलाह माननी थी और सैन्य शक्ति में कमी लानी थी। व्यावहारिक रूप से अंग्रेज़ों

के हाथ में सत्ता का हस्तांतरण हो गया। 12 अगस्त 1765 की इलाहाबाद की संधि के मार्फत इसे औपचारिकता भी प्रदान की गयी। इस संधि के अनुसार मुगल बादशाह ने अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कम्पनी को बंगाल बिहार और उड़ीसा का दीवान नियुक्त किया। इन तीनों प्रांतों का वित्तीय प्रशासन कम्पनी को सौंप दिया गया और इसके बदले में कम्पनी द्वारा बादशाह को 2,600,000 रुपये प्रतिवर्ष देने थे। बंगाल के नवाब नाजिम बने रहे और औपचारिक रूप से उन्हें प्रतिरक्षा कानून और व्यवस्था और न्यायालय का क्षेत्र सौंपा गया। संक्षेप में, प्रशासन का सारा जिम्मा नाजिम का हुआ और राजस्व तथा सभी अधिकारों पर कम्पनी का हक बना। इस प्रकार दीवानी प्राप्त कर अंग्रेज़ वृहद बंगाल के मालिक बन बैठे। हैदराबाद और अवध के विपरीत बंगाल में स्वायत्ता का नामोनिशान नहीं छोड़ा गया।

बोध प्रश्न 2

1) बंगाल के नवाब अपनी स्वायत्तता की रक्षा करने में क्यों सक्षम नहीं रहे? 100 शब्दों में उत्तर दीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2) निम्नलिखित वक्तव्यों को पढ़कर सही (✓) और गलत (×) का निशान लगाएँ।

क) अंग्रेज़ों की मजबूत सैन्य शक्ति के कारण सिराजुद्दौला प्लासी के युद्ध में पराजित हुआ। ( )

ख) प्लासी के युद्ध से अधिक फायदा अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कम्पनी को हुआ न कि मीर जाफर को। ( )

ग) ईस्ट इंडिया कम्पनी और मीर जाफर के बीच युद्ध का मुख्य कारण यह था कि मीर जाफर अपने वादे पर अटल नहीं रहा। ( )

घ) बंगाल की अर्थव्यवस्था में अंग्रेज़ों की बढ़ती घुसपैठ के कारण नवाब और अंग्रेज़ों में युद्ध हुआ। ( )

2.5 अवध: स्वायत्तता की ओर

प्रथम चरण में बंगाल की तरह अवध में भी स्वायत्तता की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति विकसित हुई और अन्तत: उसका भी अंग्रेज़ी राज में विलय हो गया। अठारहवीं शताब्दी में क्षेत्रीय राजनीतिक व्यवस्था के रूप में अवध के उदय में आर्थिक और भौगोलिक कारकों के साथ-साथ बुरहानुल मुल्क सआदत खाँ की राजनीतिक स्वायत्तता की दृढ़ इच्छा का भी महत्वपूर्ण हाथ था।

2.5.1 सआदत खाँ और अवध

सआदत खाँ को दिल्ली दरबार में कभी भी अपेक्षित सम्मान और अधिकार प्राप्त नहीं हुआ। मुगल केन्द्रीय सत्ता का सक्रिय भागीदार न बन पाने के कारण सआदत खाँ ने अपने को अवध

में केंद्रित किया और अपनी सारी ऊर्जा अवध को मजबूत और स्वायत्तता बनाने में लगा दी। वह अवध को एक साम्राज्य के रूप में विकसित करने का स्वप्न देखा करता था।

अर्थव्यवस्था की दृष्टि से अवध अठारहवीं शताब्दी में समृद्ध था, व्यापार और कृषि उन्नत अवस्था में थे। भौगोलिक दृष्टि से भी यह क्षेत्र सामरिक महत्व का था, यह गंगा के उत्तरी तट और हिमालय पर्वत के बीच स्थित था। इसके अलावा यह केन्द्रीय सत्ता, (दिल्ली) के भी करीब था।

सआदत खाँ को अवध की सूबेदारी 1772 ई. में प्राप्त हुई थी। इसके पूर्व वह आगरा प्रांत का प्रशासक था, जहाँ उसे जाट बागियों को दबाने में कोई खास सफलता हासिल नहीं हुई थी। अवध की सूबेदारी संभालने के बाद सआदत खाँ ने अपनी सारी शक्ति अवध को स्वायत्त राज्य बनाने में लगा दी।

औरंगजेब की मौत के बाद केन्द्रीय सत्ता में आयी अव्यवस्था ने उसे इस काम में सहायता प्रदान की। अवध की बागडोर संभालने के शीघ्र बाद सआदत खाँ को विद्रोही सरदारों और राजाओं का जबरदस्त सामना करना पड़ा। अपनी स्थिति मज़बूत करने के लिए उसने निम्नलिखित कदम उठाए:

- स्थानीय बागी जमींदारों और सरदारों का दमन,
- मदद-ए-माश के अनुदान प्राप्तकर्ताओं की शक्ति को नियंत्रित किया,
- राजस्व वसूली को व्यवस्थित किया, और
- कुछ स्थानीय जमींदारों से संधि की।

प्रांतीय प्रशासन के सभी महत्वपूर्ण पदों पर उसने अपने संबंधियों और सहयोगियों को नियुक्त किया। इस तरह वह प्रांतीय पदाधिकारियों की वफादारी सुनिश्चित कर लेना चाहता था। इन उपलब्धियों के बाद सआदत खाँ में इतना आत्मविश्वास आ चुका था कि उसने बगैर केन्द्रीय सत्ता की अनुशंसा के अपने दामाद सफदर जंग को उप गवर्नर नियुक्त कर दिया। यह अवध सूबे की स्वायत्तता का स्पष्ट प्रमाण था। 1735 तक अवध पर सआदत खाँ का नियंत्रण इतना जबरदस्त हो चुका था कि दिल्ली ने बेहिचक उसे कोरा जहानाबाद की फौजदारी दे दी और बाद में बनारस, जौनपुर, गाजीपुर और चुनारगढ़ के राजस्व वसूली का काम सौंप दिया। फिर भी सआदत खाँ की ये उपलब्धियाँ केन्द्रीय राजनीति की देन थी, इसका संबंध क्षेत्रीय स्वायत्तता से नहीं था, वस्तुत: सआदत खाँ अभी भी केन्द्रीय राजनीति पर अपने दावे से पूर्णत: मुक्त नहीं हुआ था। हालांकि उसने क्षेत्रीय राजनीतिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए थे और इससे केन्द्रीय नियंत्रण बाधित हुआ था पर अभी भी यह क्षेत्रीय स्वतंत्रता और नियंत्रण मुगल ढाँचे की परिधि में ही था। लेकिन शीघ्र ही सआदत खाँ का केन्द्र के साथ टकराव शुरू हो गया। 1737 में सआदत खाँ ने मराठा आक्रमण का सामना करने के लिए अधिक क्षेत्रीय अधिकार और सैन्य नियंत्रण की मांग की पर मुगल दरबार ने उसे ठुकरा दिया। 1739–40 में उसने फारसी आक्रमणकारियों का सामना किया और इसके बदले मीर बख्शी के पद की मांग की। इसे भी मुगल दरबार ने नहीं माना। इसके साथ मुगल दरबार के साथ उसका अलगाव लगभग पूरा हो गया। 1739 में सआदत खाँ मजबूत सेना के साथ फारसी आक्रमणकारियों से मुगल बादशाह की रक्षा करने के लिए आगे आया। पर मुख्य फारसी सेना पर एकाएक आक्रमण से वह स्वयं ही नादिरशाह का बन्दी बन गया। इसके बावजूद सआदत खाँ ने नादिरशाह को प्रभावित किया और फारसी सेना और मुगलों के बीच समझौता कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। पर इसी समय फारसी दल में षड्यंत्र हुआ और बहुत से लोग सेना छोड़ कर भाग खड़े हुए। इसके बड़े दुष्परिणाम हुए। सआदत अपने फारसी संबंध का उपयोग मुगल राजनीति में अपना हक स्थापित करने के लिए करना चाहता था। पर नादिरशाह का विश्वास अपने विश्वस्त पात्रों पर से उठ गया और उसने सआदत से अधिक से अधिक धनराशि की मांग की। इन गतिविधियों और केन्द्रीय राजनीति के खेल से निराश होकर सआदत ने अपने प्राण त्याग दिये।

2.5.2 सफदर जंग और अवध

सआदत खाँ ने एक अर्द्ध स्वायत्तता प्रांतीय राजनीतिक व्यवस्था अपने दामाद और मनोनीत उत्तराधिकारी के लिए छोड़ी थी। अपने आंतरिक संगठन और कार्यकलाप में यह अब केन्द्रीय

सत्ता के अधीन नहीं थी और दिल्ली दरबार को भेजे जाने वाले राजस्व में अनियमितता आ गयी थी। इसके अलावा, प्रांत की राजस्व व्यवस्था को पुनर्व्यवस्थित किया गया था, दीवान का पद समाप्त कर दिया गया था और स्थानीय हिन्दू लोगों को प्रशासन में शामिल किया गया था।

1739 और 1764 के बीच अवध अपने उत्कर्ष पर था और वहाँ पूर्ण स्वायत्तता कायम हो चुकी थी। ऊपरी तौर पर बादशाह के साथ अभी भी संबंध कायम sr, उदाहरणस्वरूप,

- उच्च पदों पर नियुक्ति के लिए बादशाह की औपचारिक अनुशंसा की जाती थी,
- केन्द्रीय राज्यकोष में राजस्व भेजा जाता था,
- आदेश, पदवी आदि मुगल बादशाह के नाम से जारी किए जाते थे।

इसके बावजूद, सफदर जंग ने साम्राज्यी घेरे के अंदर अवध में स्वायत्त राजनीतिक व्यवस्था के आधार को मजबूत करने का हर संभव प्रयास किया। उसने गंगा के मैदानी क्षेत्रों पर अपना नियंत्रण स्थापित किया और रोहतास, चुनार के किलों और इलाहाबाद की सूबेदारी को विनियोजित किया। इन उपलब्धियों से मुगल दरबार में उसकी हैसियत बढ़ी और उसे विजारत का पद प्राप्त हुआ। फर्रुखाबाद के अधिग्रहण और स्वायत्तता के उसके लगातार प्रयत्नों के कारण मुगल दरबार से उसका रिश्ता विच्छिन्न हुआ। सफदर जंग से वजीर का पद छीन लिया गया। हालांकि 1754 में दिल्ली पर मराठों के आक्रमण के दौरान मुगल दरबार में थोड़े समय के लिए उसे जगह मिली, पर मुगल दरबार पर उसका प्रभाव वस्तुतः समाप्त हो चुका था।

2.5 शुजाउद्दौला और अवध

[illegible] के उत्तराधिकारी शुजाउद्दौला को प्रांत की विस्तृत सीमाओं को सुदृढ़ करने और अपने स्व[illegible]त्र सूबे से मुगल साम्राज्य के साथ तालमेल बैठाने में अधिक सफलता प्राप्त हुई। उसने पूर्व में बढ़ती हुई अंग्रेजी शक्ति के खिलाफ संधियाँ कीं और इस कार्य में उसे सफलता भी मिली। इसी प्रकार राजस्व वसूली को व्यवस्थित किया गया, सैन्य शक्ति मजबूत की गयी

चित्र-1 दस पुत्रों के साथ अवध का नवाब शुजाउद्दौला

और राज्यकोष में नियमित रूप से धन आने लगा। प्रशासन और नौकरशाही में हिन्दू समुदाय को अच्छा प्रतिनिधित्व मिला। राजा बेनी बहादुर को नायब नियुक्त किया गया और नवाब ने एक मराठी भाषी ब्राह्मण को अपना सचिव बनाया। नवाब के प्रमुख सेनानायकों में हिन्दुओं के साथ-साथ गोसाई साधु भी शामिल थे।

अपने पूर्वाधिकारियों के पदचिह्नों पर चलते हुए शुजाउद्दौला ने भी मुगल बादशाह से पूरी तरह से संबंध विच्छेद नहीं कर लिया। अपने राज्यारोहण की अनुशंसा भी उसने बादशाह से प्राप्त कर ली थी। उसने सफलतापूर्वक उत्तर भारत में बादशाह द्वारा साम्राज्यी नियंत्रण स्थापित करने के प्रयत्न को निष्फल कर दिया। शुजाउद्दौला ने शाही-दरबार में अवध की सत्ता को पुनर्स्थापित किया और वजीर का पद हासिल किया। उसने 1761 के युद्ध में मराठों के खिलाफ अहमद शाह अब्दाली का पक्ष लिया और उत्तर भारत में मराठों को बढ़ने से रोका। इस प्रकार से 1764 में ईस्ट इंडिया कम्पनी के साथ युद्ध के पहले शुजाउद्दौला ने अवध में एक स्वायत्त राजनीतिक व्यवस्था कायम कर ली थी, जिसकी शुरुआत 18वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से हो चुकी थी।
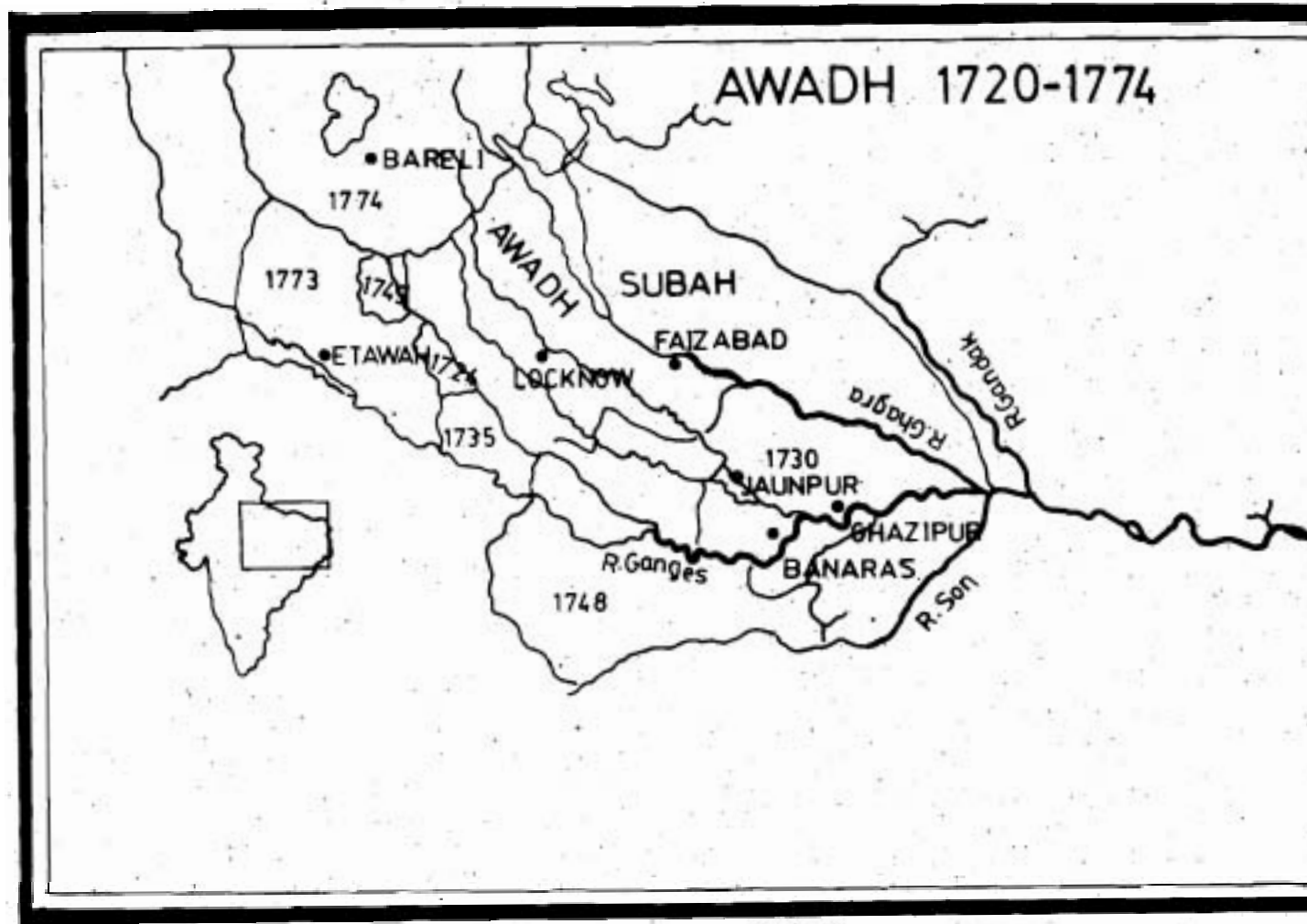
मानचित्र-3

बोध प्रश्न 3

1) सआदत खाँ ने अवध को स्वतंत्र राजनीतिक इकाई बनाने के लिए क्या-क्या प्रयत्न किये ? 100 शब्दों में उत्तर दें।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2) निम्नलिखित वक्तव्यों को पढ़ें और सही (✓) और गलत (×) का निशान लगाएँ।

क) सफदर जंग ने मुगल राज्यकोष में राजस्व भेजना बंद कर दिया। ( )

ख) सफदर जंग ने अपने प्रशासन में काफी संख्या में हिन्दुओं को नियुक्त किया। ( )

ग) शुजाउद्दौला अवध में दिल्ली दरबार पर अपना वर्चस्व जमाने में असफल रहा। रहा। ( )

घ) शुजाउद्दौला ने मुगल बादशाह से अपना संबंध पूरी तरह तोड़ लिया। ( )

2.6 अवध: पराधीनता की ओर

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के दौरान अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कम्पनी का उत्तरी भारत में प्रभाव बढ़ा और इसका अवध की अर्थव्यवस्था और राजनीति पर गहरा प्रभाव पड़ा। 1801 तक मध्यवर्ती राज्य (बफर स्टेट) के रूप में अवध की एक महत्वपूर्ण भूमिका थी और वह एक तरह से मराठों से बंगाल क्षेत्र की रक्षा करता था। अत: 19वीं शताब्दी में अवध अंग्रेज़ी विस्तार के रास्ते में रोड़ा बन गया। इस स्वतंत्र सूबे से अंग्रेज़ों की बार-बार टकराहट हुई और अंतत: 1856 में यह प्रांत अंग्रेज़ी राज्य में मिला लिया गया।

2.6.1 अवध: 1764–1775

बक्सर की लड़ाई में बंगाल के नवाब मुगल बादशाह और शुजाउद्दौला के संयुक्त मोर्चे को अंग्रेज़ों ने हरा दिया। इससे अवध की शक्ति और प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगा। इलाहाबाद की संधि के बाद अवध अंग्रेज़ी जाल में फंस गया। इस संधि के अनुसार शुजाउद्दौला का अवध पर अधिकार बना रहा, पर कोरा और इलाहाबाद मुगल बादशाह को सौंपना पड़ा। शुजाउद्दौला को युद्ध हर्जाने के रूप में 50 लाख रुपये देने पड़े, और कम्पनी से यह भी संधि करनी पड़ी कि अवध और कम्पनी एक दूसरे के राज्य-क्षेत्रों की रक्षा करेंगे। बंगाल के नवाबों के समान अवध के नवाब भी अंग्रेज़ों की शक्ति और मनसूबे से परिचित थे और वे अपने दावों को बिना संघर्ष के छोड़ने वाले नहीं थे। अत: अवध में अंग्रेज़ों की व्यापारिक घुसपैठ को लगातार रोका गया। इसके साथ-साथ अवध की सेना को मजबूत और व्यवस्थित बनाने की कोशिश की जाती रही।

बक्सर की हार के बाद शुजाउद्दौला ने सैन्य सुधार आरंभ किया। उसका उद्देश्य अंग्रेज़ों को डराना या उनसे युद्ध करना नहीं था, बल्कि वह अपनी सत्ता को पुनर्स्थापित करना चाहता था, वह उस खोई हुई प्रतिष्ठा को पुन: प्राप्त करना चाहता था, जिसे विदेशी अंग्रेज़ी शक्ति ने धक्का पहुँचाया था। कम्पनी के लिए अवध इतना महत्वपूर्ण और लाभदायक राज्य था, जिसे वे नजरअंदाज नहीं कर सकते थे। इस राज्य के अपार राजस्व का उपयोग कम्पनी की सेना को मजबूत बनाने के लिए किया जा सकता था। एक सुनियोजित तरीके से कम्पनी ने अपनी वित्तीय माँगें बढ़ानी शुरू की। 1773 ई. में अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कम्पनी और अवध के बीच पहली लिखित संधि हुई। इस संधि के मुताबिक नवाब को इलाहाबाद और अवध में स्थित कम्पनी की सेना के खर्च के लिए 2,10,000 रुपये प्रति माह का भुगतान करना था। यहीं से अवध कम्पनी का ऋणी बनता गया और यहीं से प्रांतीय राजनीतिक व्यवस्था में अंग्रेज़ों का हस्तक्षेप बढ़ना शुरू हुआ।

2.6.2 अवध: 1775–1797

1775 में और उसके बाद नवाबी की अभेद्यता पर प्रश्न चिह्न लगा। विडंबना यह है कि इसी दौरान लखनऊ क्षेत्रीय सांस्कृतिक विरासत और दरबार के केन्द्र के रूप में पहले से अधिक मुखर हो उठा। फैज़ाबाद के स्थान पर लखनऊ अवध की नयी राजधानी बन चुका था। आसफुद्दौला के अधिकार को किसी खास चुनौती का सामना नहीं करना पड़ा, थोड़ा सा अवरोध शुजाउद्दीन के दरबारियों और उसके भाई सआदत अली (रोहिल खंड का गवर्नर) के दल ने खड़ा किया। लेकिन शीघ्र ही मुर्तजा खां (आसफुद्दौला का विश्वासपात्र, जिसे मुख्तार उद्दौला का खिताब दिया गया) के नेतृत्व में पुरानी प्रशासनिक व्यवस्था में फेर बदल किया गया और पुराने सरदारों और सेनानायकों को हटा दिया गया। मुख्तार ने अवध के नवाब की ओर से कम्पनी से संधि की, जिसके मुताबिक बनारस के आसपास के इलाके (जौनपुर के उत्तर और इलाहाबाद के पश्चिम का इलाका, जिस पर एक समय चैत सिंह का अधिकार था) अंग्रेज़ों को सौंप दिये गये। इस संधि के अनुसार कम्पनी की सेना के लिए दी जाने वाली राशि बढ़ा दी गयी और भविष्य के अंग्रेज़ी नवाबी लेन देनों में मुगल बादशाह की मध्यस्थता समाप्त कर दी गयी। नवाब के दरबार में अंग्रेज़ों ने एक रेज़िडेंट को नियुक्त किया, जिसे सभी कूटनीतिक और विदेशी संबंधों को नियंत्रित करना था।
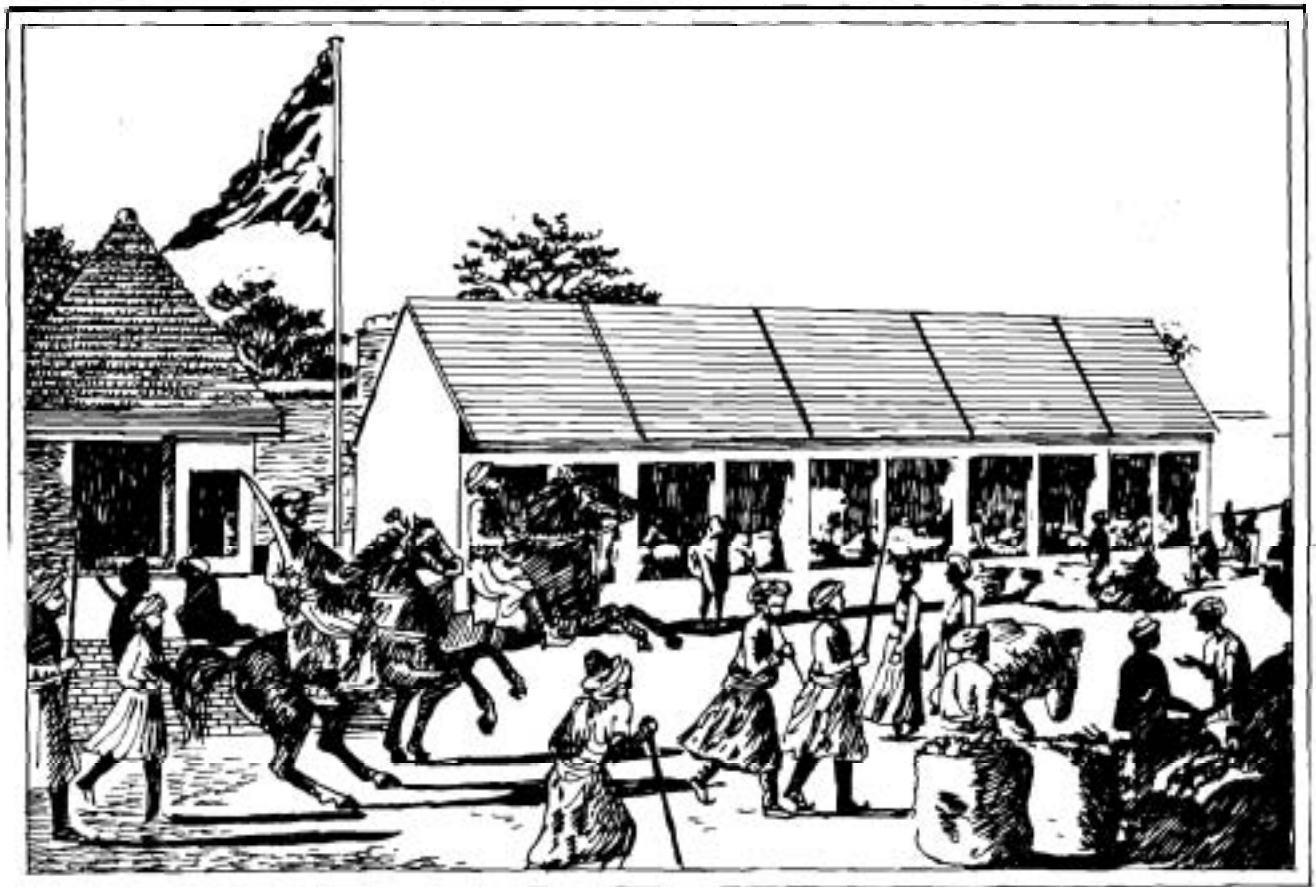
चित्र-2 अठारहवीं शताब्दी में लखनऊ की गली

राजनीतिक व्यवस्था के पतन, अवध के मामले में अंग्रेज़ों के बेबाक हस्तक्षेप और आसफुद्दौला की ऐयाशी और राजनीतिक गतिविधियों से निरासक्ति ने अवध के सरदारों के बड़े हिस्से को चौकन्ना कर दिया। स्थिति तब और बिगड़ गयी जब सेना को बहुत दिनों से वेतन नहीं मिला और उन्होंने जगह-जगह बगावत कर दी। इस अव्यवस्था और गड़बड़ी का फायदा अंग्रेज़ों को मिला और उनकी घुसपैठ का रास्ता आसान हो गया। 1770 के दशक में अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कंपनी ने लगातार अवध की प्रभुसत्ता पर आक्रमण किया। अंग्रेज़ी *iff* के लगातार जमाव ने नवाबी शासन को गहरा धक्का पहुँचाया और कम्पनी का हस्तक्षेप बढ़ता चला गया। पहली

बार 1780 ई. में इसका विरोध हुआ। कलकत्ता में स्थित सर्वोच्च अंग्रेज़ी सरकार को यह सोचने के लिए विवश होना पड़ा कि अगर अवध के स्रोतों का सही और लाभदायक उपयोग करना है तो अंग्रेजी रेजिडेंट के हस्तक्षेप को कम करना होगा।

अत: 1784 में वारेन हेस्टिंग्स ने आसफुद्दौला से कई संधियाँ कीं, जिससे अवध के कर्ज का बोझ घटाकर 50 लाख कर दिया गया और इससे अवध का बोझ कुछ कम हुआ।

आगे आने वाले डेढ़ दशक में अवध अर्द्धस्वायत्त प्रांतीय सत्ता के रूप में काम करता रहा और कम्पनी के साथ उसका सौहार्दपूर्ण संबंध बना रहा। यह स्थिति आसफ की मृत्यु (1797) तक कायम रही। आसफ की मृत्यु के बाद अंग्रेज़ों ने उत्तराधिकार के प्रश्न पर फिर हस्तक्षेप किया। उन्होंने आसफ द्वारा मनोनीत उत्तराधिकारी वजीर अली को पदच्युत कर दिया और सआदत अली को नवाबी सौंप दी। इसके बदले में सआदत अली ने 21 फरवरी, 1798 को अंग्रेज़ों से संधि की, जिसके मुताबिक उसे हर साल 76 लाख रुपये अंग्रेज़ों को देने थे।

चित्र-3 नवाब आसफुद्दौला अपने मन्त्रियों के साथ ब्रिटिश कर्मचारियों से बातचीत करते हुये।

2.6.3 अवध: 1797–1856

लार्ड वेलेस्ली ने, जो 1798 ई. में भारत आया था, एक कदम और आगे बढ़कर, अवध व्यवस्था को ही समाप्त कर दिया। नवाब ने अंग्रेज़ों की बढ़ी हुई वित्तीय मांगों के भुगतान में अपनी असमर्थता जाहिर की। वेलेस्ली को यह सुनहरा मौका मिला और उसने इसी आधार पर अवध हड़पने की नीति अपनाई। हेनरी वेलेस्ली सितम्बर 1801 में लखनऊ पहुँचा और पूरे राज्य के समर्पण की मांग की। लंबी बातचीत के बाद यह निश्चित किया गया कि अवध का अधिकार क्षेत्र रोहिलखंड, गोरखपुर और दोआब के इलाके तक सीमित रहेगा, जिसकी कुल आमदनी 1 करोड़ 35 लाख रुपये थी। 1801 की संधि के बाद अंग्रेज़ी-अवध संबंध का एक नया आयाम शुरू हुआ। अब इस निरापद सूबे से कम्पनी के स्थायित्व को कोई खतरा नहीं

था। वस्तुत: अवध के नवाबों ने भी इस काल में अंग्रेज़ों के बढ़ते प्रभुत्व का विरोध नहीं किया। अपनी सेना और आधे से अधिक क्षेत्र छिन जाने के बाद नवाबों ने अपना ध्यान सांस्कृतिक क्षेत्र की ओर केन्द्रित किया। इस क्षेत्र में वे आसुफद्दौला के पद चिह्नों पर चल रहे थे, जिसने लखनऊ और उसके दरबार के चारों तरफ एक जीवंत सांस्कृतिक माहौल पैदा कर दिया था। दिल्ली के पतन के बाद कवि और शायर लखनऊ दरबार की ओर आकृष्ट होने लगे और लखनऊ दरबार ने उन्हें शरण दी। इन शायरों में मिर्जा रफी सौदा (1713–86), मीर गुलाम हसन (1735–86) आदि उल्लेखनीय हैं।

गजियाल-दीन हैदर (1819) द्वारा बादशाही की दिखावटी हैसियत अपनाने और मुगल प्रभुसत्ता के औपचारिक अधिग्रहण के बाद अवध की दरबारी संस्कृति तेजी से फली-फूली। पर इसके साथ-साथ प्रशासन और प्रांत पर नवाब की पकड़ ढीली होती गयी। कम्पनी द्वारा प्राप्त संरक्षण के लिए नवाब को भारी रकम चुकानी पड़ती थी, प्रशासनिक जिम्मेवारी मंत्रियों के हाथों में चली गयी और अंग्रेज़ रेजिडेंट का हस्तक्षेप बढ़ता गया, इससे अवध की हालत खस्ता हो गयी।

यह अध:पतन नासिरुद्दीन-हैदर, मोहम्मद अली शाह और अमजद अली शाह के शासन काल में भी जारी रहा (1827–47)। इनमें से कोई भी शासक प्रशासन पर नियंत्रण रखने और कम्पनी के राजनीतिक नियंत्रण से अपने को मुक्त रखने में अक्षम था। उनकी उपलब्धि केवल यही थी कि उन्होंने अवध को नाम के लिए स्वायत्त हैसियत दी और लखनऊ को एक सांस्कृतिक केन्द्र के रूप में विकसित किया। अंग्रेज़ रेजिडेंट का प्रशासन पर पूर्ण अधिकार था और वह द्वैध या अप्रत्यक्ष शासन करता था। कम्पनी इस विरोधाभास से अपरिचित नहीं थी, और बार-बार अवध के पूर्ण अधिग्रहण की बात सोची जाती थी। पर यह विचार इस आधार पर स्थगित कर दिया गया कि कम्पनी अभी अवध का प्रशासन सीधे तौर पर नहीं लेना चाहती थी। अंतत: 1856 में वाजिद अली शाह को पदच्युत कर दिया गया और अवध अंग्रेज़ी राज्य में मिला लिया गया। गवर्नर जनरल डलहौजी ने अपने अधिनायक को लिखा "आज से हमारी महारानी के अधीन 5 लाख और लोग आ गये हैं और उनके विगत कल के राजस्व में 13 लाख रुपयों की वृद्धि हुई है।" इस प्रकार अवध की कहानी का अंत हुआ, बुरहानुलमुल्क (सआदत खाँ) के स्वतंत्र घराने का सूर्यास्त हुआ। यह घराना लगातार दो साम्राज्यों-मुगल और अंग्रेज़ से संघर्ष करता रहा और उनके बीच पिस कर रह गया।

2.7 क्षेत्रीय राजनीतिक व्यवस्था का स्वरूप

पिछले भागों में बंगाल और अवध के संदर्भ में हमने क्षेत्रीय राजनीतिक शासनों की बनावट और कार्यकलाप पर बातचीत की। इस भाग में हम क्षेत्रीय राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप और प्रांतीय राजनीतिक व्यवस्था के अंतर्गत कार्य कर रही विभिन्न शक्तियों की चर्चा करने जा रहे हैं। हालांकि बंगाल और अवध, दोनों ही राज्यों में स्वतंत्र अस्तित्व की स्थापना का प्रयास किया गया, पर औपचारिक रूप से मुगल संप्रभुता स्वीकार की जाती रही। अवध में, 1819 में जाकर गाजीउद्दीन हैदर के गद्दीनशीन होने के साथ-साथ मुगल संप्रभुता को एकतरफा अस्वीकार कर दिया गया। मुगल साम्राज्यी सत्ता से पूरी तरह संबंध विस्थापित नहीं किया गया और मुगल प्रांतीय सरकार के स्वरूप में बहुत बदलाव नहीं आया। इस काल की उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि प्रांतीय शासक मजबूत होते गये और प्रांतीय शासकों पर केन्द्रीय सत्ता की पकड़ ढीली होती गयी। सत्रहवीं शताब्दी की तुलना में यह बिल्कुल बदली हुई परिस्थिति थी।

18वीं शताब्दी में प्रांतों की स्वतंत्र सत्ता स्थापित हुई, इसमें जमींदारों, व्यापारियों आदि का सहयोग भी प्राप्त हुआ। व्यापारी और महाजन 18वीं शताब्दी में राजनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हो गये और इन्होंने क्षेत्रीय राजनीतिक व्यवस्था के उदय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 17वीं शताब्दी के दौरान इस वर्ग ने मुगल राजस्व व्यवस्था और कृषीय उत्पाद तथा शिल्पगत वस्तुओं के व्यापार को स्थापित और विकसित किया। इसके बावजूद साम्राज्यी राजनीति में इनका दखल न के बराबर था। पर 18वीं शताब्दी में केन्द्रीय सत्ता के कमजोर होने और मुगल राज्यकोष के दिवालिया होने पर इस व्यापारिक वर्ग ने विकसित हो रहे क्षेत्रीय राजनीतिक

व्यवस्था को आर्थिक आधार प्रदान किया। ये शासकों और सरदारों के आर्थिक मददगार बन गये। प्रशासन के कार्यकलाप में इन वाणिज्यिक और व्यापारिक समुदायों का प्रभाव मुखर हो उठा। सरकार ने इन व्यापारिक घरानों से काफी मात्रा में बतौर कर्ज धन प्राप्त किया। बनारस में स्थापित राजस्व व्यवस्था पर अग्रवाल बैंकरों का पूरा नियंत्रण था। वस्तुत: आसफुद्दौला के शासन काल (1755–97) में अवध पर कर्ज का बोझ इतना बढ़ गया कि अंग्रेज़ रेजिडेंटो को इस मामले में हस्तक्षेप करना पड़ा। बंगाल में जगत सेठों के घराने की प्रांत के प्रशासन मुख्य भूमिका हो गयी। इस प्रकार अठारहवीं शताब्दी में व्यापारियों और महाजनों की प्रांतीय प्रशासन व्यवस्था में उल्लेखनीय भूमिका स्थापित हो गयी।

चित्र-4 अठारहवीं शताब्दी का एक सेठ

व्यापारियों के साथ-साथ प्रांत में जमींदारों का बोलबाला भी बढ़ा। केन्द्रीय सत्ता की क्षीण होती हुई शक्ति और नियंत्रण के कारण स्थानीय स्तर पर जमींदारों ने अपनी स्थिति मजबूत की और अपने इलाकों में बाजारों तथा व्यापार पर कर लगाने लगे, मुगल प्रशासन के उत्कर्ष के दिनों में ऐसा करना उनके लिए संभव न था। देहाती इलाकों में राजस्व की वसूली और कानून एवं प्रशासन की जिम्मेदारी जमींदारों ने अपने कब्ज़े में ले ली। प्रांतीय राजनीतिक व्यवस्था का स्थायित्व जमींदारों के सक्रिय सहयोग पर निर्भरशील हो गया। जमींदार और व्यापारी एक दूसरे की मदद किया करते थे और बहुत से मामलों में जमींदार ही महाजन भी थे और वे वाणिज्य में पूंजी निवेश किया करते थे। इस परस्पर स्वार्थ ने उन्हें एक दूसरे पर निर्भरशील बना दिया। हम यह देख चुके हैं कि किस प्रकार राज्य पर अपना नियंत्रण स्थापित करने के लिए अवध और बंगाल के नवाबों ने जमींदारों से अच्छे संबंध कायम किए।

बंगाल और अवध की राजनीतिक व्यवस्था की एक अन्य उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि इनके राजस्व प्रशासन में काफी संख्या में हिंदुओं की नियुक्ति की गयी। अवध में आत्मा राम, राजा राम नारायण और बंगाल में राय दुलर्भ और अमीर चन्द जैसे हिन्दू पदाधिकारियों को राजस्व प्रशासन का भार सौंपा गया था। हिन्दुओं द्वारा नवाब की सत्ता के प्रतिरोध को कम से कम करने के लिए राजस्व प्रशासन में हिंदू पदाधिकारियों की नियुक्ति को प्रोत्साहित किया गया। इस प्रकार राजस्व प्रशासन के अधिकारी के तौर पर और बतौर क्लर्क बहुत से हिंदुओं की नियुक्ति हुई।

18वीं शताब्दी के पाँचवें छठे दशक के आसपास अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कम्पनी का दखल बंगाल और अवध की प्रशासनिक व्यवस्था में धीरे-धीरे बढ़ने लगा। कम्पनी की बढ़ती आर्थिक और सैन्य शक्ति ने प्रांतीय राजनीतिक व्यवस्था पर उसके नियंत्रण को और मजबूत कर दिया। इस स्थिति का फायदा उठाकर उन्होंने विभिन्न गुटों को आपस में लड़ाया और प्रांत में अपनी स्थिति मजबूत की।

चित्र-5 ब्रिटिश कर्मचारियों के साथ एक भारतीय जमींदार

बोध प्रश्न 4

1) बक्सर के युद्ध में शुजाउद्दौला की हार का अवध पर क्या प्रभाव पड़ा ? पचास शब्दों में उत्तर दीजिए।

....
....
....
....
....
....

2) अवध अपनी स्वायत्तता की रक्षा क्यों न कर सका ? 100 शब्दों में उत्तर दीजिए।

....
....
....
....
....
....
....

3) क्षेत्रीय राजनैतिक व्यवस्था में व्यापारियों की भूमिका का उल्लेख करें। उत्तर 60 शब्दों में दीजिए।

....
....
....
....
....
....

2.8 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के दौरान हमने देखा कि अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में बंगाल और अवध में स्वतंत्र स्वायत्त राज्यों का उदय हुआ। इस क्षेत्रीय स्वायत्तता का जन्म एकाएक नहीं हुआ, बल्कि यह प्रांतों पर मुगल सत्ता के कमजोर होते नियंत्रण का परिणाम था। बंगाल ने अपनी यह स्वायत्तता तीन दशकों (1757) तक कायम रखी और अवध 1801 तक स्वतंत्र राज्य के रूप में कार्य करता रहा। अपनी सैन्य शक्ति के बल पर और प्रदेश के स्रोतों पर अधिकार जमाकर अंग्रेज़ी ईस्ट इंडिया कम्पनी ने इन प्रदेशों पर अपना अधिकार जमा लिया। बंगाल में, आधी शताब्दी पहले ही अंग्रेज़ों का प्रभुत्व कायम हो गया और उन्होंने एक ही झटके में ब्रिटिश पूर्व व्यवस्था को छिन्न भिन्न कर दिया। अवध के मामले में राजनीतिक व्यवस्था के कमजोर होने और अधिग्रहण की प्रक्रिया थोड़ी लंबी चली, पर उसका अंत भी लगभग वैसा ही हुआ।

2.9 शब्दावली

खालसा भूमि: ऐसी भूमि जो, शासक के प्रत्यक्ष नियंत्रण में हो।

निज़ामत: गवर्नरों का पद।

पेशकश: अधीनस्थ प्रांतीय सरदारों द्वारा मुगल साम्राज्यी सत्ता को दिया जाने वाला राजस्व।

मदद-ए-माश: धार्मिक और सामाजिक उपयोग के कार्यों के लिए दी गयी राजस्व मुक्त भूमि।

विज़ारत: वज़ीर का पद।

सूबा: प्रांत। मुगल बादशाह ने प्रशासनिक व्यवस्था के तहत सम्पूर्ण देश को विभिन्न प्रांतों में विभक्त किया था।

स्वायत्त: ऐसा राज्य जो बगैर किसी बाहरी सत्ता के नियंत्रण के अपनी सरकार चलाता हो।

2.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) इस उत्तर में प्रांतीय स्तर पर पदाधिकारियों की नियुक्ति, केन्द्रीय राजस्व कोष में वार्षिक नजरानों का भुगतान, प्रांत में वंशानुगत शासन की स्थापना आदि बातें शामिल होनी चाहिए। देखें भाग 2.2.

2) उच्च पदाधिकारियों की नियुक्ति, राजस्व प्रशासन की व्यवस्था, वंशानुगत शासन की स्थापना आदि, देखें, भाग 2.3.

बोध प्रश्न 2

1) आपको अपने उत्तर में नवाब के दरबार में हुए षड्यंत्र, प्रशासन पर नवाबों का नियंत्रण का अभाव, ईस्ट इंडिया कम्पनी की भूमिका आदि पर विचार करना होगा। देखें भाग 2.4.
2) क) ×, ख) ✓, ग) ×, घ) ✓

बोध प्रश्न 3

1) अवध में स्वायत्त राजनीतिक व्यवस्था कायम करने के लिए सआदत ख़ाँ द्वारा उठाए गये कदमों का उल्लेख करें। देखें उप-भाग 2.5.1.
2) क) × ख) ✓, ग), ×, घ), ×

बोध प्रश्न 4

1) इस उत्तर में आपको इस बात पर प्रकाश डालना है कि किस प्रकार बक्सर के युद्ध के बाद अवध अंग्रेज़ों के नियंत्रण में आता गया। देखें उपभाग 2.6.1.
2) इस उत्तर में आपको नवाबों की असफलता, प्रशासन में समन्वय का अभाव, सैन्य प्रशासन को संगठित रखने में असफलता आदि का जिक्र करना है। देखें भाग 2.6.7.
3) इस उत्तर में आपको क्षेत्रीय राजनीतिक व्यवस्था में व्यापारियों के बढ़ते प्रभुत्व का जिक्र करना है। देखें भाग 2.7.